Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 61-66 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.9

The changing social structure of Uttarakhand

Bhal Chandra Singh Negi

Department of Geography Government Postgraduate College Gopeshwar District Chamoli Garhwal, Uttarakhand

Corresponding Author Email id: negibcs1276@gmail.com

Received: 11.12.2023; Revised: 28.12.2023; Accepted: 29.12.2023
©Society for Himalayan Action Research and Development

Abstract: The impact of geographical disparities on social groups residing in a specific area greatly influences the cohesion of the community. The social customs, traditions, societal structure, values, festivals, celebrations, and daily activities of the inhabitants of that region are broadly influenced by these geographical variations. As a result, different social landscapes develop and evolve in each region due to the geographical features. This is because physical conditions on the ground start to change as they move from one place to another. Therefore, as a result of the interaction between humans and nature, developed social landscapes also change along with the natural environment, leading to changes in human settlement and their way of life in a particular area. As a result of modern development, significant changes are becoming evident in various aspects such as local communities, local cultural traditions, family structures, rural social systems, marriage customs, inheritance practices, and so on. Over centuries, not only has the region integrated into the mainstream of the nation's flow but also actively participated in the nation's development.

उत्तराखण्ड का बदलता सामाजिक स्वरूप

भाल चन्द सिंह नेगी
असि 0 प्रोफेसर भूगोल रा0 स्ना0 महाविद्यालय गोपेश्वर चमोली

सारांश

पृथ्वी तल पर पाई जाने वाली भौगोलिक विषमताओं का प्रभाव क्षेत्र विशेष में रहने वाले सामाजिक समूह की सघनता उस क्षेत्र के निवासियों के सामाजिक रीति–रीवाज, सामाजिक व्यवस्था, संस्कार ,उत्सव, पर्व क्रियाकलापों पर व्यापक रूप से प्रभाव पड़ता है। जिसके फलरूप प्रत्येक क्षेत्र में अलग–अलग सामाजिक स्वरूप वाले भूदृश्यों का उद्‌भव व विकास होता है। क्योंकि धरातल पर भौतिक दशाऐं एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुचते ही बदलने लगती हैं, अतः मानव व प्रकृति के समायोजन के फलस्वरूप विकसित सामाजिक भूदृश्य भी प्राकृतिक वातावरण के साथ–साथ बदलते जाते हैं, जिसके फलस्वरूप एक क्षेत्र विशेष में मानव वसाव व उनके जीवन यापन का ढ़ंग बदल जाता या अन्य क्षेत्रों से अलग दिखाई देता है। आधुनिक विकास के परिणामस्वरूप क्ष्त्रा का स्थानिय समाज ,स्थनिय लोक संस्कृति, परिवार व्यवस्था, ग्रामीण समाज व्यवस्था,विवाह नातेदारी, परम्पराऐं प्रथाऐ आदि सभी तथ्यों में व्यापक परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं, आधुनिक साधनों के विकास ने इस क्षेत्र की समाज व संस्कृति की जीवनधारा ही बदल कर रख दी है। सदियों से अपने सीमित प्राकृतिक प्रवेश में रहने वाला अब न केवल राष्ट्र की धारा में सम्मिलित हो चुका है, बल्कि राष्ट्र के विकास में बढ़–चढ़कर भागी दारी भी निभा रहा है।

प्रस्तावना– उत्तराखण्ड का हिन्दू समाज अन्य मैदानी राज्यों के हिन्दू समाज की तरह हिन्दू समाज के लिऐ स्वीकृत परिवार व समाज व्यवस्था को मानने वाला है। हालाकिं परिवार तथा सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित क्षेत्र के अपने स्थानिय नियम भी हैं, उत्तराखण्ड में सामान्य हिन्दू के अलावा भोटिया, बौक्सा, गुजर, जनजातियॉ निवास करती हैं, जो हिन्दू धर्मालम्बी होने के बाबजूद रीति रीवाजों के बाबजूद

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 61-66 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.9

रीति–रीवाजो के मामले में गढ़वाली समाज से पर्याप्त भिन्न है। गढ़वाली–कुमॉऊनी हिन्दू समाज देश के अन्य भागों की तरह उत्तराधिकार की भाई बॉट की परम्परा तथा अनुसूचित जाति वर्ग से अन्य जातियें द्वारा छुआ–छूत का भेदभाव की प्रथा ग्रामीण अंचलो में कायम है। जबकि मुख्य मार्गों व नगर क्षेत्रों में यह जातिय भेद की परम्परा समाप्त होती जा रही है, आम आदमी आधुकि विचारो से समरसता भाव से रहने लगे है, जेा क्षेत्र विशेष की सामाजिकत में परिवर्तन होता देखा जा सकता है। यहॉ परिवार पितृ सत्तात्मक होते हैं तथा सयुक्त कुटुम्ब की प्रथा पायी जाती है क्षेत्र में गॉव की समाज व्यवस्था का नियन्त्रण गॉव के प्रधान तथा गॉव के सम्भ्रान्त व्यक्तियों की समिति द्वारा होता रहा है। जिसका निर्णय पूरे गाव को मान्य

होता है। गॉव में पधान मुखिया का यह पद वंशानुगत होता था, जो उसकी मृत्यु के बाद उसके जेष्ठ पुत्र को स्वतः ही मिल जाता था[1]। प्रायः यह व्यवस्था त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था में ग्राम प्रधान ने ले लियी है।

Fig 1 : Location Map of Uttarakhand

गढ़वालियों व कुमॉऊनियों का सामाजिक जीवन सम्पूर्ण क्षेत्र में एक समान नहीं है, सामाजिक व्यवस्था के रूप में प्रचीन काल से इस क्षेत्र में सामाजिक रूप से यहॉ के मुख्य निवासियों (खसियों) और अनुसूचित जातियों का सामाजिक स्वरूप अपने ढ़ंग का और ब्राहमणों व क्षेत्रीयों का अपने ढ़ंग का पाया जाता है, इनमें कोई संदेह नहीं कि लौकिक रिवाजों की वास्तव में कुछ खिंचड़ी सी प्रतित होती है, किन्तु धार्मिक

रिवाज बिलकुल पृथ्क है। लेकिन सारा ग्रामीण समाज मेल–जोल से रहता है, परिवार में सबसे वरिष्ठ पुरूष सदस्य का मान–सम्मान यहॉ की मूल प्रथा आज भी कायम है।

परिवार व्यवस्था–उत्तराखण्ड अन्य हिमालयी प्रदेशों की तरह इस प्रेदश में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों में परिवार व्यवस्था के सन्दर्भ में सबसे प्रमुख परिवर्तन यहॉ सयुक्त परिवार प्रथा का तेजी से समाप्त होना है। नगरीय व कस्बाई क्षेत्रों में तो यह प्रथा पूर्णतः समाप्त हो चुकी है परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में भी जहॉ–जहॉ सड़के पहुॅची हैं, शिक्षा का स्तर बढा है तथा नौकरी पेशा लोगो की संख्या बढ़ी है वहॉ भी यह प्रथा समाप्त होने की स्थिति में है, सभी क्षेत्रों में परिवार व्यवस्था के सन्दर्भ सामूहिक परिवारिक दायित्व के स्थान पर व्यक्तिवादी सोच बढ़ी है। आज सड़कों से दूर स्थित ग्रामीण अंचलो में ही संयुक्त कुटुम्ब वाले परिवार मिलते हैं परन्तु यहॉ भी आज परिवारिक बंटवारा शीघ्र हो जाता है। इसके साथ ही परम्परागत नियमों में भी सभी भागों में शिथिलता दिखाई देती है। परिवारिक उत्तराअधिकार के अन्तर्गत परिवारिक बटवारे में परिवार के ज्येष्ठ पुत्र को दियी जाने वाली जेठूली (बड़ी बॉट) तथा महत्वपूर्ण परिवारिक मामलो में फैसले देने की प्रथा अब केवल सुदूरवर्ती गिने चुने गॉवों में ही दिखाई देती है।

ग्रामीण समाज व्यवस्था– उत्तराखण्ड के ग्रामीण समाज में पधान मुख्या का पद यद्यपि गॉव में अब भी कायम है, परन्तु यह पद मात्रा औपचारिक होकर रह रह गया है। गॉव समाज के मामलों में पधान की राय अब जरूरी नहीं समझी जाती हालांकि सुदूरवर्ती गॉवों में यह प्रथा अब भी कायम है। जहॉ दूसरे गॉव में पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत निर्वाचित प्रधान का पद अब महत्वपूर्ण माना जाता है। परन्तु गॉव समाज के मामलो में उसकी राय भी महत्वपूर्ण नहीं समझी जाती, गॉव समाज के मामले अब गॉव के सम्पन्न व्यक्तियों शिक्षित नव युवको तथा अनुभवी बृद्ध सदस्यों द्वारा मिल बैठ कर निपटाये जाते हैं सड़क मार्गों से दूर स्थित सुदूरवर्ती गॉवों में परम्परागत गॉव पंचायत अब भी सक्ष्म मानी जाती है तथा ग्राम पंचायत केवल सरकारी खाना पूर्ति का कार्य करती है।

सामाजिक प्रथाओं में परिवर्तन– गॉवों में गॉव **समाज** के विकास हेतु सामूहिक श्रमदान की प्रथा समाप्त हो चुकी है। यह प्रथा नदी वेसिनो के ऊपरी भागों तक ही सीमित रह गई है। इसके स्थान पर निर्वाचित ग्राम पंचायतों द्वारा ही विभिन्न रोजगार योजनाओं के अन्तर्गत कार्य कराये जाते हैं, गॉव समाज के सामूहिक क्रियाकलापों का जिम्मा अब युवक मंगल दल तथा महिला मंगल दलों ने ले लिया है, जिनका गठन प्रदेश के प्रत्येक गॉव में हो चुका है। परिवारिक व भूमि विवाद के सभी मामले जो पहले गॉव की पंचायत द्वारा निपटाऐ जाते थे अब इनमें बहुत कम मामले केवल नाममात्र पंचायत द्वारा निपटाऐ जाते हैं अनेक मामलों में लोगों को कोर्ट कचरी की शरण भी लेनी पडती है। गॉव समाज के परम्परागत मान्य नियमेां के उलंघन के लिए किये जाने वाले सामाजिक वहिष्कार के मामलों में भी शिथिलता आ गई है। ऐसे मामलों में अब केवल आर्थिक दण्ड लगाकर दोषि व्यक्ति को स्वीकृति दी जाती है। क्षेत्र में ऐसे मामलों में सामाजिक वहिष्कार की प्रथा अब केवल सुदूरवर्ती गॉवों में ही अब कायम है।

असपृश्यता व वर्ग भेद–यहॉ के समाज में विभिन्न वर्गो के बीच आपसी आचार व्यवहार के अपने परम्परागत नियम हैं। जिनमें आन्तरिक ग्रामीण क्षेत्रों को छोडकर शेष भागों में काफी शिथिलता आ गई है, अधिकांश गॉवों में अब भी विवाह या अन्य सामाजिक अवसरों पर भात पकाने का काम केवल शेरूला ब्राहमण ही किया करते हैं तथा सभी लोग जूते उतार कर पक्ति भेद के अनुसार बैठकर सामूहिक भोज

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 61-66 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.9

करते हैं[2]। अब कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में इस तरह का भेदभाव नही वरता जाता परन्तु अधिकांश गॉवों में यह प्रथा अब भी कायम है। आपसी शिष्टाचार के शेष नियमों का पालन अब भी पूर्ववत किया जाता है।

सवर्णों द्वारा अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों के साथ अश्यपृश्यता का भाव अब भी कायम है, परन्तु इस भेद भाव के कही नियम अब समाप्त हो चुके हैं। शहरी व कस्बाई क्षेत्रों में अनुसूचित जाति वर्ग के लोग सवर्णो के साथ मिल बैठकर ख–पी लेते हैं तथा हरिजनो का सवर्णो के घर के प्रवेश करना (केवल रसोई व शयन कक्ष छोडकर) वर्जित नहीं समझा जाता है। जबकि लगभग सभी ग्रामीण क्षेत्रों में हरिजनों का घर के अन्दर प्रवेश वर्जित माना जाता है तथा वे केवल घर के चौक में प्रवेश कर सकते हैं। इसी प्रकार सड़कों के निकट गॉवों में, जहॉ शिक्षित व नौकरी पेशा लोगों की संख्या बढ़ी है, अनुसूचित जाति का छुआ घी दूध, तरल पदार्थ इत्यादि ग्रहण किया जाने लगा है, हालॉकि अब भी कई व्यक्ति उनका पकाया या परासा भोजन वर्जित मानते है। सड़कों से दूर स्थित गॉवों में छुआ–छूत के सभी परम्परागत नियमों का अभी भी कडाई से पालन किया जाता है तथा इन भागों में सवर्णों व हरिजनों के पानी भरने के धारे–पनेरे (जल स्रोत) अलग–अलग होते हैं। किन्तु यह परम्परा शिक्षा व आधुनिकीकरण के कारण धीरे–धीरे कम होती जा रही है।

विवाह व नातेदारी –उत्तराखण्ड के ग्रामीण भागों में अब अन्तर जातिय विवाह भी होने लगे हैं। यहॉ सामान्य हिन्दू जाति की तरह सभी विवाह केवल अपने वर्ग में ही होते हैं तथा अपने वर्ग में भी अपने ही गौत्र में विवाह नहीं होते हैं स्वतंत्रता से पूर्व ग्रामीण भागों में कन्या शूल्क देकर विवाह की प्रथा (टके का विवाह) सार्वभौमिक थी तथा विवाह में वर का जाना आवश्यक नहीं समझा जाता था[3], ब्राहम विवाह केवल ब्राहमणों और सभ्रान्त क्षेत्रीय वर्ग में ही होता था। अब यह प्रथा सम्पूर्ण क्षेत्र में समाप्त हो गई है तथा इस तरह के विवाह यदा–कदा ही सुनाई देते हैं। क्षेत्र में ब्राहम विवाह में दहेज की प्रथा सभी वर्गों में बढी है तथा दहेज में अब परम्परागत रूप से दिये जाने वाले पश–ुसम्पदा अनाज व खेती– बाड़ी के उपकरण, अनाज (दूणा–देजा) के स्थान पर आधुनिक उपभोक्ता वस्तुऐं साजो– सामान व नगद धनराशि दी जाने लगी है।

विवाह समारोह भी अब सीमित अवधि में सम्पन्न होने लगे हैं, कस्बाई व नगरिय क्षेत्रों और सड़को से जुडे ग्रामीण क्षेत्रों में सम्पूर्ण विवाह समारोह एक ही दिन में सम्पन्न होने लगे हैं।[4],जबकि शेष ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह समारोह अब भी परिस्थितियों के अनुसार तीन से पॉच दिन तक चलते रहते हैं। परिवारिक रिश्तों में सास,ससुर व बहू, जेठ व छोटे भाई की पत्नि जैसे रिस्तों में भी शिथिलता दिखाई देने लगी है, इन रिश्तों को बोलने में भी लोग अपने को कमोवश पीछड़ा समझने लगे हैं, आज यह क्षेत्र पाश्चत्य जगत के

प्रभाव से प्रभावित होकर सास,ससुर को बहुऐं ममी पापा और ननद ,जेठानी को दीदी बोलने का रिवाज प्रचलित होता जा रहा है। युवा पीढी भी में भी सारे नाते–रिश्ते जैसे ताऊ–ताई (बोडा–बढी),मोसा–मौंसी, (काका–काकी) चाचा–चाची, कॉसी–पूफू (बुआ) पर्यायः लुप्त से होते जा रहे हैं। इन रिश्तों के स्थान पर केवल और केवल अंकल–ऑन्टी के रिश्ते ही प्रचलन में देखे जा सकते हैं। केवल प्रदेश के ग्रामीण क्षत्रों में ही पुराने रिश्ते–नाते देखने को मिलते है। आज पढ़े लिखे व नौकरी पेशा वर्ग में आयोजित विवाहों के स्थान पर गन्दर्व विवाह (लब मैरिज) भी प्रदेश के सभी भागों में स्वीकार कर लिये जाते हैं। प्रदेश में बहु–पत्नि विवाह अब सुदूरवर्ती भागों में ही कहीं कहीं दिखाई देते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व सभी सम्पन्न व्यक्ति एक से अधिक विवाह किया करते थे, प्रदेश में विधवा विवाह अब भी पहले की तरह स्वीकार्य है। कुमॉऊ–गढ़वाल के पर्वतीय क्षेत्र में स्त्रियों को परिवारिक व सामाजिक मामलों में काफी स्वतंत्रता मिली हुई है। इससे सम्बधित प्रथाऐं (परित्याकता विवाह, स्त्रियों द्वारा पूर्व पत्ति को छोड़कर पुनर विवाह स्वेच्छा से वर पसंद करना आदि) अब भी कायम है, हालांकि मैदानी हिन्दू समाज के प्रभाव से इस तरह की घटनाऐं पहले की अपेक्षा काफी कम हुई है। सड़कों से जुड़े ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह समारोह आधुनिक तौर तरीकों से सम्पन्न होने लगे है। जिसमें विवाह व मृतक संस्कार के अवसर पर गाय दान प्रतिक स्वरूप धनराशि देकर निपटा लिया जाता है। विवाह समारोहों में आधुनिक बैंण्ड बाजे, डीजे साउण्ड बॉक्स, विवाह समारोह की विडियो रिकार्डिंग,बुफे शिष्टम से विवाह भोज, टैंट, वैडिंग की व्यवस्था आदि आधुनिक साज–सामान का प्रयोग किया जाने लगा है। इन अवसरों पर स्त्रियों द्वारा मांगल गीत गाने की परम्परा व बारात के स्वागत गीत की परम्परा के साथ–साथ पर्व उत्सवो, त्यौहारों पर महिला–पुरूषों द्वारा सामूहिक छाछरी, झुमेला, चौफला,की परम्परा भी समाप्त होती जा रही है। सड़को से दूरस्थित गॉवो में यद्यापि विवाह समारोह परम्परागत रूप से सम्पन्न होते हैं परन्तु यहॉ भी समारोह के कई नियमों में आवश्यकता अनुसार कटौती होने लगी है।

परम्परागत रीति–रीवाज व प्रथाऐं– राज्य के सुदूरपूर्व अंचलो को छोडकर लगभग सभी स्थानो पर घस काटते समय के घसियारी गीत, चौमासा, खुदेड गीत जो विभिन्न घटनाक्रमो का वर्णनन गीतों के माध्यम से संचार के रूप में महिलाओं द्वारा गाये जाते थे, वे प्रायः आज लुप्त प्रतित होते हैं। इसके साथ ही पंचमी, संक्रान्ति त्यौहार के अवसरों पर अनुसूचित जाति की महिला–पुरूषों द्वारा समय–समय पर गाये जाने वाले पंचमी–संक्रान्ति मॉगने के त्यौहारी गीत भी लुप्त हो गये है। वहीं बग्वाल (दीपावली व छोटी बग्वाल इगास) पर भेला खेलने की प्रथा, और गॉवों में देवी–देवताओं को सुबह–शाम औजीयों द्वारा धुनियाल देने की प्रथा व धान की रूपाई के समय हुडकिया द्वारा हुडका–डौंर बजाकर घान रूपाई की प्रथा भी धीरे–धीरे समाप्त होती जा रही है। आज इस क्षेत्र में शादी– व्याह, मुंण्डन संस्कार पर बजने वाले ढोल–दमाऊ, बिगपाइपर ,मस्कबीन वाघ्य यंत्रों का स्थान बैंण्ड–बाजा, इलैक्ट्रॉनिक बाध्य यंत्रों ने ले लिया है। आधुनिकता के प्रभाव से हर सामाजिक कार्य में पुरूषों की अपेक्षा महिलाऐं अधिक भागीदारी अदा करने लगी है। पूजा पाठ शादी–व्याह, देव कथाओं आदि सामाजिक समारोहों पर पुरूषों की अपेक्षा महिलाऐं अधिक देखी जा सकती है। प्रतिनिधि के तौर पर पंचायतों में महिलाओं की भूमिका बढ़ी है। प्रदेश में महिलाओं में घुंघट व प्रर्दा प्रथा समाप्त सी हो गयी है।

निष्कर्ष– इस प्रकार कह सकते हैं कि आज उपभोक्त वाद व प्रदेश में आधुनिक सुविधओं का विकास के फलस्वरूप बड़ी मात्रा में सामाजिक परिवर्तन दिखाई देता है, किन्तु प्रदेश के पर्वतीय जनपदों में नाते–रिस्ते

व शिष्टाचार पूर्व की भॉति यथावत दृष्टिगोचर है। कस्बाई व नगरीय क्षेत्रों में वाहय जगत का थोडा बहुत प्रभाव (रीति–रीवज, रिस्ते–नाते व शिष्टाचार, तीज–त्यौहार, विवाह संस्कार आदि में परिवर्तन) देखा जा सकता है। जबकि पर्वतीय ग्रामीण अंचलों में आज भी सामाजिक कार्यो (जैसे शादी–विवाह, देव कार्य पूजा –पाठ, मुंण्डन संस्कार, पितृ कार्यों आदि) में सामाजिक सहभागीता व समरस्ता सहयोग का भाव स्पष्ट दिखाई देती है। जिसमें सभी जाति वर्ग अपनी–अपनी छमता के अनुरूप आर्थिक,शाररीक, मानसिक सहयोग निःस्वार्थ भाव से करते देखे जा सकते हैं। यहॉ का सम्पूर्ण समाज मेल–जोल और सामाजिक सम–रस्ता की भावना से सदैव एक–दूसरे के सुख –दुःख–दर्द में एक साथ रहते हैं यह उत्तराखण्ड के पर्वतीय अंचलों–जनपदों की सामाजिकता का प्रमुख द्योतक कहा जा सकता हैं।

सन्दर्भ सूची

1–. रतूडी, हरिकृण, (1968): गढवाल का इतिहास, भागीरथी प्रकाशन, टिहरी गढवाल, पृष्ठ–218।
2– डबराल, शिव प्रसाद ,(1976): उत्तराखण्ड का इतिहास, भाग–7, वीरगाथा प्रकाशन, दुगड्डा, पौडी गढ़वाल, पृष्ठ –28, 29।
3– नौटियाल, शिवानन्द, (1991): गड़वाल दर्शन, नूतन पब्लिकेशन , नई दिल्ली, पृष्ठ–54, 63।
4–बैंजवाल, रमाकान्त , (2002): समाज –संस्कृति व यातायात –पर्यटन का परिचयात्मक विवरण, विनसर पब्लिकेश्न , नई दिल्ली, पृष्ठ–84, 107।